Volume-5, No. 1 Feb.-2018, pp. Hin.31-35

संस्कृत वाङ्मय में गन्धयुक्ति

डा0 आशारानी वर्मा, एसोसियेट प्रोफेसर
विभागाध्यक्ष संस्कृत विभाग
नेशनल (पी0जी0) कॉलेज, भोगाँव (मैनपुरी) उत्तर–प्रदेश भारत।

गन्धेन लभते कामान् गन्धो धर्मप्रदः सदा।
अर्थानां साधको गन्धः गन्धे मोक्षः प्रतिष्ठितः।।[1]
कालिका पुराण में गन्ध को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त करने का साधन माना गया है। पृथ्वी तत्व की तन्मात्रा है गंध। अतः धरतीपुत्र मनुष्य के लिए गंध प्रकृति का अनुपम उपहार है। प्रकृति का कण–कण अपनी विशिष्ट संरचना, रूप, रंग, गंध और स्वाद के लिए पहचाना जाता है। गंध मनुष्य को जीवन के प्रारम्भ से लेकर अंत तक ज्ञात और अज्ञात रूप में प्रभावित करती है। अपने शरीर और मन को गंध के माध्यम से स्वस्थ और प्रसन्न रखने के लिए मनुष्य ने जो कला या विद्या विकसित की उसे ही गन्धयुक्ति के नाम से जाना जाता है। दूसरे शब्दों में सुगन्धित तेल, इत्र इत्यादि द्रव्य तैयार करने की कला को गन्धयुक्ति कहते हैं।
भारतीय परम्परा 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' में विश्वास रखती है। इसीलिए हमारे देश में प्राचीन काल से ही धार्मिक और सामाजिक कार्यों में सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग तामसिक भावनाओं के शमन और सात्विक भावनाओं के पोषण के लिए किया जाता है।

मुख्य शब्द– सुगन्ध, सुवासा, गन्ध शोधन, पाक कर्म, दाहा कर्षित, धूप योग, चूर्णीकृत, घृण्ट वर्ग, प्राण्यागंज, पुटपाक, गर्तपाक, बेणुपाक।

वेदों में सुगंधि, पुण्यगंध, सुरभि, स्रक, सुवास जैसे पद यह दिखलाते हैं कि वैदिक समाज इससे भिज्ञ था। ऋग्वेद में अश्विनी कुमारों के लिए 'पुष्करस्रजौ' शब्द का प्रयोग किया गया है।[2] स्रक का अर्थ है 'पुष्पमाला' अन्यत्र अग्निदेव को सुंगधि मुखवाला बताया गया है।[3] ऋग्वेद के इस प्रसिद्ध मंत्र में भी 'सुगंधि' शब्द का प्रयोग हुआ है–

त्र्यबकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारूकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतांत्।।[4]

ऋग्वेद में उषस् सूक्त में 'सुवासा' पद का प्रयोग किया गया है।[5] इसी वेद में एक स्थान पर 'पुण्यगन्धा' पद प्रयुक्त हुआ है।[6] सुगन्धित द्रव्य गुग्गुल के औषधीय गुण और सुगन्ध का उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है।

आश्वलायन गृह्यसूत्र में यह बताया गया है कि विद्यार्थी को शिक्षा समाप्त होने पर अपने गुरू को सुगन्धित पुष्पहार, अनुलेपन आदि अर्पित करने चाहिए।

रामायण और महाभारत में सुगन्धित द्रव्यों के विविध प्रयोग के उल्लेख मिलते हैं। महाभारत में गंध की दस श्रेणियां बताई गई हैं – इष्ट, अनिष्ट, मधुर, अम्ल, कटु, निर्हारी, संहत, स्निग्ध, रूक्ष और विशद।[7]

वात्स्यायन के समय तक गन्धयुक्ति की कला प्रतिष्ठित हो चुकी थी। 'कामसूत्र' में गणना की गई चौंसठ कलाओं में गन्धयुक्ति भी है।[8]

आचार्य वाराहमिहिर द्वारा रचित बृहत्संहिता अपने नाम के रूप एक विश्वकोष है जिसमें मानव रूचि के विविध विषयों जैसे खगोलशास्त्र, वास्तुशास्त्र, ग्रहों की गति, सुगन्धित द्रव्यों का निर्माण, रत्न विषयक ज्ञान आदि का वर्णन है। इस ग्रंथ में लेखक ने 'गंधयुक्ति' नामक अध्याय में सैंतीस श्लोकों के माध्यम से सुगन्धित द्रव्यों के प्रयोग की चर्चा की है। गन्धयुक्ति अध्याय में प्रथम श्लोक द्वारा ही आचार्य सुगन्धित द्रव्यों के प्रयोग को प्रोत्साहित करते हुए कहते हैं कि श्वेत केशों वाले पुरूष को पुष्पमाला, गंध, वस्त्र, आभूषण आदि शोभित नहीं होते इसलिए व्यक्ति को केशों को रंगने का यत्न करना चाहिए–

स्रग्गन्धधूपाम्बरभूषणाधं न शोभते शुक्लशिरोरूहस्य।
यस्मादतो मूर्द्धरागसेवां कुर्याद्यथैवाज्जनभूषणानाम्।।[9]

इसके बाद बृहत्संहिता में विविध द्रव्यों के प्रयोग द्वारा केशों को रंगने की विधि वर्णित है। केशों को रंगने के बाद केशरंजक द्रव्यों की गंध को दूर करने के लिए बालों को धोने के लिए सुगन्धित जल तैयार करने का वर्णन है। इसके लिए दालचीनी, कूठ, रेणुका, नलिका, स्पृंक्का, बोल, तगर, नेत्रवाला, नागकेशर और गंधपत्र

को समभाग में प्रयोग करना चाहिए। तत्पश्चात सुगन्धित तेल का प्रयोग करना चाहिए। मंजिष्ठ, व्याघ्रनरव, शुक्ति त्वक् और कूठ को तेल में मिलाकर धूप में तपाने से उस तेल में चंपापुष्प की गंध हो जाती है। इसके बाद विविध प्रकार की गंध वाले तेलों को बनाने के लिए द्रव्यों का नाम बताया गया है। पत्र, तुरूष, नेत्रबाला और तगर को समभाग में मिलाने से उद्दीपक गंध प्राप्त होती है। इसी में व्याम को मिलाने से और गुग्गुल की धूप देने से मौलसिरी (बकुल) के समान गंधद्रव्य तैयार होता है। इसी में कूठ मिला देने से नील कमल के समान गंध हो जाती है।[10]

आचार्य वाराहमिहिर ने पटवास अर्थात वस्त्रों को सुगन्धित करने के लिए त्वक्, उशीर, पत्र और छोटी इलायची के चूर्ण में कर्पूर व कस्तूरी मिलाकर सुगंध बनाने की विधि बताई है।

आचार्य ने सोलह द्रव्य बताये हैं– घन, नेत्रबाला, शैलेयक, कर्पूर, उशीर, नागकेशर, व्याघ्रनख, स्पृक्क, अगरू, दमनक, नख, धनिया, चोरू और चन्दन। इनमें से किन्हीं चार द्रव्य के एक, दो, तीन और चार भाग बदल कर लेने से गंधार्णव तैयार होता है। लेखक ने जो गणितीय नियम बताये हैं उनके अनुसार कुल 174720 सुगंध द्रव्य तैयार होते हैं।[11]

अग्निपुराण में गन्धयुक्ति संबंधी आठ कर्म बताये गये हैं– शौच, आचमन, विरेचन, भावन, पाक, बोधन, धूपन और वासन।

शौचमाचमनं राम! तथैव च विरेचनम्।
भावना चैव पाकश्च बोधनं धूपनं तथा।।[12]

अग्निपुराण में इस सम्बन्ध में इक्कीस धूप द्रव्यों की चर्चा है– नख, कूठ, घन, जटामांसी, स्पृक्क, शैलेयज, जल, कुकुंम, लाक्षा, चंदन, अगरू, नीरद, सरल, देवदारू, कर्पूर, कान्ता, बाला, कुन्दरूक, गुग्गुल, श्रीनिवासक और सर्जरस इनमें से दो दो द्रव्य लेकर सर्जरस के साथ नख, पिण्याक (तिल की खली), चन्दन का चूर्ण और मधुयुक्त करके इच्छानुसार धूपयोग बनाया जा सकता है।[13] इसी प्रकार स्नान हेतु सुगंधित जल तैयार करने के लिए द्रव्यों के नाम बताये गये हैं। तदन्तर सुगंधित तेलों की निर्माण विधि है जिसमें महत्वपूर्ण बात यह है कि तिलों को अनेक पुष्पों की गंध में बसाकर सुगंधित तैल तैयार करने का विधान है। मुखवासक अर्थात मुख को सुगन्धित रखने के लिए सुगंधित गुटिकाओं के बनाने की विधि भी अग्निपुराण में मिलती है।

विष्णुधर्मोत्तरपुराण के चौसठवें प्रकरण का इति वाक्य इस प्रकार है– **'इतिश्रीविष्णुधर्मोत्तरे द्वितीयखंडे मा0सं0 रामं प्रति पुष्करोपाख्याने गन्धयुक्तिर्नाम चतुष्षष्टितमोऽध्यायः।'** इस अध्याय में उनचास श्लोक गन्धयुक्ति से सम्बन्धित हैं। अग्निपुराण और विष्णुधर्मोत्तरपुराण में इस विषय में पर्याप्त समानता है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण का गन्धयुक्ति अध्याय का प्रारम्भ सुगन्धित द्रव्य निर्माण की आठ विधियों के वर्णन से होता है–

शोधनं वसनं चैव तथैव च विरेचनम्।
भावना चैव पाकश्च बोधनं धूपनं तथा।।
वासनं चैव निर्दिष्टं कर्माष्टकमिदं शुभम्।
कपित्थबिल्वजम्बाम्रबीजपूरकपल्लवैः।।[14]

अर्थात सुगन्धित द्रव्य तैयार करने के लिए आठ कर्म होते हैं– शोधन, वसन, विरेचन, भावना, पाक, बोधन, धूपन और वासन। ये शोधन आदि कार्य पंचपल्लव– कपित्थ, बिल्व, जम्बु, आम्र और बीजपूरक की सहायता से करना चाहिये। पंचपल्लव के रस से द्रव्य को धोना और सुखाना शोधन है। शोधित द्रव्य को चूर्ण बनाकर हरीतकी की पिष्टी बनाकर कषाय की भावना देना विरेचन है। कुंकुमादि द्रव्यों के साथ भावना देने का नाम भावना है। दो मिट्टी के पात्रों के बीच रखकर पकाने का नाम पाक कर्म है। इस द्रव्य को कल्कपिष्ट के साथ संयुक्त करना बोधन है। बोधन के बाद चन्दन, अगरू, कर्पूर आदि के साथ धूपन कार्य होता है। धूपन के बाद गुटिका बनाकर सुगन्धित पुष्प के साथ छाया में सुखाना वासन है। पुराणकार ने इक्कीस द्रव्यों का उल्लेख किया है– नख, कूठ, घन, जटामांसी, स्पृक्क, शैलेयज, जल, कुकुंम, लाक्षा, चन्दन, अगरू, नत, सरल, देवदारू, कर्पूर, कार्त, बाला, कुन्दुरूक, गुग्गुल, श्रीनिवासक और सर्जरस। इनमें से दो–दो द्रव्य लेकर सर्जरस और मधु के साथ मिलाने से धूपयोग बनते है।[15] सुगंधित तैलों के बनाने की सरल विधि इस पुराण में उपलब्ध है–

तैलं निष्पीडितं रामं तिलैः पुष्पाधिवासितैः।
वासनापुष्पसदृशं गन्धेन तु भवते द्रुतम।।[16]

अर्थात् तिल के तैल में सुगन्धित पुष्पों को बसाने से फूलों की सुगन्ध तैल में आ जायेगी और सुगन्धित तैल तैयार हो जावेगा।

गन्धयुक्ति के सम्बन्ध में कालिकापुराण का अध्ययन उपयोगी है। इस पुराण में देवताओं को तुष्ट करने वाली पांच प्रकार की गंध बतायी गई हैं– चूर्णीकृत, घृष्ट, दाहाकर्षित, सम्मर्दज और प्राण्यंगोद्भव। पत्र और पुष्प का चूर्ण चूर्णीकृत वर्ग में आता है। जिन द्रव्यों के घर्षण या घिसने से गंध प्रकट होती है वे घृष्ट वर्ग में आते हैं। जो जलाने से अग्नि के सम्पर्क में आने पर सुगंध प्रकट करते हैं वे दाहाकर्षित वर्ग में आते हैं। जिन द्रव्यों का रस निष्पीडित कर सुगंध प्राप्त की जाती है वे सम्मर्दज वर्ग में आते हैं। किसी

प्राणी के शरीरांश से प्राप्त गंध प्राण्यांगज है, जैसे – कस्तूरी[17]।

कालिका पुराण में पूजा के लिए पाँच सामग्रियाँ बताई गई है– 'गन्धं पुष्पं च धूपं च नैवेद्यमेव च।' इस सम्बन्ध में धूप का विस्तृत विवरण दिया गया है। धूप वह है जिसमें द्रव्य का काष्ठ अग्नि के सम्पर्क में आने पर सुगंधित धूप प्रकट करे। घ्राण को प्रिय लगने वाली धूप पांच प्रकार की होती है– निर्यास, पराग, काष्ठ, गन्ध और कृत्रिम।

गन्धयुक्ति के संदर्भ में चालुक्य वंशीय नरेश सोमेश्वर द्वारा लिखित 'मानसोल्लास' नामक ग्रंथ महत्वपूर्ण है। ग्यारहवीं शताब्दी के लगभग लिखा गया यह ग्रंथ राजा को प्रसन्न रखने के लिए विविध साधनों के बारे में बताता है। इस ग्रंथ की तृतीय विंशति में विविध भोगों की चर्चा है। इसमें स्नानोपभोग, ताम्बूलभोग, विलेपन भोग, माल्योपभोग, धूप भोग, और पानीय भोग में सुगंधि तैयार करने की विधा वर्णित है। स्नानभोग के अन्तर्गत सत्ताइस श्लोकों में सुगंधित जल से स्नान की जानकारी दी गयी है। ताम्बूल भोग के अन्तर्गत इक्कीस श्लोकों में सुगंधित ताम्बूल तैयार करने की विधि दी गई है। विलेपन भोग के अन्तर्गत उन्तीस श्लोकों में सुगंधित और सुखदायक लेपों का वर्णन है। यहाँ पर सोमेश्वर ने ऋतु के अनुकूल लेपों की चर्चा की है। जैसे बसन्त ऋतु के लिए यक्षकर्दम लेप को उत्तम बताया है। कवि का परामर्श है कि स्वेद की गंध को दूर करने के लिए कक्षभाग, कर्णसन्धि, नाभि और वक्ष पर सुगंधित लेप लगाना चाहिये।[18] धूपयोग के अन्तर्गत धूपवर्तिका बनाने का वर्णन दिया गया है। सोमेश्वर के लाक्षा, गुग्गुल, कर्पूर, राल–कुष्टुरू, सिल्हक, श्रीखंड, दारू, सरल, लघुकोष्ठक, बालक, मांसी, कुकुम, पथ्या, कस्तूरी, पूतिबीजक, शंखनाभि और नख का चूर्ण बनाकर उसमें दोगुना कर्पूर मिलाना चाहिए। पुनः मधु, घी और गुड़ के साथ पिण्ड बनाकर धूपवर्तिका तैयार की जा सकती है।[19] आसन भोग, वस्त्र भोग, माल्योपभोग आदि के वर्णन से ऐसा प्रतीत होता है कि ग्यारहवीं और बारहवीं शती तक नागरिक सुगंधित द्रव्यों का प्रचुर प्रयोग करने लगे थे।

पदमश्री नामक बौद्ध ने 1000ई0 के लगभग 'नागर सर्वस्व' नामक ग्रंथ की रचना की जिसके चतुर्थ परिच्छेद का नाम है गन्धाधिकार, नागर सर्वस्व के अनुसार जिन वस्तुओं को सुगन्धित करने की आवश्यकता है वे हैं – केश, बाहु मूल, घर का भीतरी भाग, वस्त्र, मुख, जल, सुपारी, स्नान के समय प्रयुक्त उद्वर्तन (उबटन), धूपवर्तिका और दीपवर्तिका –

कुन्तलकक्ष्यगृहोदरवसनवदनसलिलपूगफलवासाम्।
स्नानोद्वर्ननचूर्णं वर्ती द्वे धूपदीपाख्ये।।[20]

उपर्युक्त के सम्बन्ध में प्रयुक्त ग्रध द्रव्यों को कवि ने विस्तार से समझाया है जो इस प्रकार है–

केशपटवास– नख, कर्पूर, कुंकुम, अगरू, शिल्हक, शर्करा।

कक्षवास– पत्रक, शैलज, शिल्हक, कुंकुम, मुस्ता, अभया, हरीतकी, गुड़।

मुखवास– त्वक्, एला, मांसि, शठी, अगरू, कुंकुम, मुस्त, चन्दन, जातीफल, लवंग, कंकोल, कर्पूर, वंशलोचन, शर्करा, सहकार।

जलवास– सूक्ष्मैला, कस्तूरी, कुष्ट, तगर, पत्र, चंदन।

उद्वर्तन– कस्तूरी, कर्पूर, चन्दन, शैलेय, नागकेसर, अगरूक।

धूपवर्ति–' कर्पूर, अगरू, चंदन, प्रियंगु, बाला, मांसी।

दीपवर्ति– गन्धरस, अगरू, गुग्गुल, सर्जरस, पूति, कर्पूर।

भारतीय गंधशास्त्र के सम्बन्ध में डॉ0 परशुराम कृष्ण गोडे ने अपने कतिपय लेखों के द्वारा महत्वपूर्ण जानकारियाँ उपलब्ध कराई हैं। उन्हें गंगाधर नामक लेखक की कृति गन्धसार की पाण्डु लिपि प्राप्त हुई और उसी के साथ गन्धवाद नामक मराठी टीका भी प्राप्त हुई। डॉ0 गोडे ने इन दोनों ग्रन्थों का उद्धार करके यह स्पष्ट कर दिया कि गन्धवाद एक शास्त्रीय विषय के रूप में हमारे देश में प्रतिष्ठित रहा है और अर्थोपार्जन का साधन भी रहा है। डॉ0 पी0के0 गोडे को गंगाधर के गन्धसार की हस्तलिखित प्रति पं0 रंगाचार्य रेड्डी के संग्रह में भण्डाकर इंस्टीट्यूट पूना के पुस्तकालय में मिली। यह प्रति लगभग 200 वर्ष पुरानी है।

गन्धसार के प्रारम्भ में लेखक ने गन्धशास्त्र की उपयोगिता बताते हुए कहा है कि इसकी सहायता से देवों की पूजा में सजीवता आ जाती है। इससे मनुष्य पुष्टिमान होते हैं। यह तीनों वर्गों के फलों को देने वाला है। दरिद्रता को दूर करता है। राजाओं को इससे तुष्टि प्राप्त होती है और विदग्ध वनिताओं के मन को यह आनन्द देने वाला है।

इस ग्रन्थ में तीन अध्याय हैं– 1. परिभाषा प्रकरण 2. गन्धोदकादि नाना गंधोपयोगी प्रकरण और निघण्टु प्रकरण।

परिभाषा प्रकरण में गंगाधर ने गन्धशास्त्र सम्बन्धी 6 कर्म बताये हैं– भावन, पाचन, बोध, वेध, धूपन और वासन। गंधचूर्ण को द्रव्यों के साथ भिगोकर रखना भावन है। भावन के बाद पाक करना पाचन है। पाचन के बाद गन्ध द्रव्य को फिर से व्यक्त करने का काम बोधन है। वेध इसी प्रकार की अन्य क्रिया है। (यह ग्रंथ में स्पष्ट नहीं है)। सुगंध द्रव्य को अग्नि के सम्पर्क से धूमवत् प्रसारित धूपन है। पुष्पों की गंध को

अन्य पदार्थों जैसे तैल में बसाकर सुगंधित करना वासन है।[21]

पाचन कर्म के अन्तर्गत गंगाधर ने पुटपाक, गर्तपाक, वेणुपाक, दोलापाक, खर्परपाक, बैजयूरपाक, कालपाक का उल्लेख किया है। पत्तों में बांधकर ऊपर से मिट्टी का लेप लगाकर अग्नि में पकाना पुटपाक है। पात्र में गंध द्रव्य रखकर मिट्टी से बंदकर गड्ढे में रखकर ऊपर से आग जलाना गर्तपाक है। गंध द्रव्य को बांस की नली में रखकर पकाना वेणुपाक है। बड़े खर्पर का पुट बनाकर नीचे से आग जलाकर पकाना खर्परपाक है। वाह्य और आभ्यन्तर का परिवर्तन करके द्रव्य को बीच में पकाना दोलापाक है। स्थूल भाण्ड में रखकर पकाना बैजयूरपाक है और अन्न के ढेर में रखकर पकाना कालपाक है।

गंधसार के दूसरे प्रकरण में गंधजल आदि बनाने के विधान दिये गये हैं जबकि तीसरे प्रकरण में सुगंधित द्रव्यों का वर्गानुसार विभाजन किया गया है। पत्र वर्ग में तालीस पत्र, मूर्वा, तुलसी पत्र आदि हैं। पुष्प वर्ग में लवंग, कुकुंम, केसर, केतकी, कदंब, बकुल, मालती, कुंद, चम्पक, आदि हैं। फल वर्ग में मरिच, कंकोल, सूक्ष्मैला, स्थूनैला, रेणुका, हरीतकी, आमलकी आदि हैं। त्वक् वर्ग में कर्पूरत्वक्, तज, लवंगत्वक्, एलावलुक, नली, खर्जूरकोश, अशोकत्वक्, आदि हैं। काष्ठ वर्ग में – चन्दन, अगरू, देवदारू, मंजिष्ठ आदि हैं। मूल वर्ग में पुष्करमूल, कूठ, जटामांसी, उशीर, लामज्जक, गांठिवन आदि हैं। निर्यास वर्ग में कर्पूर, सिल्हरस, बोल, गुग्गुल, श्रीवास, सरल, शर्करा आदि हैं। जीव वर्ग में कस्तूरी, सरल, नखी, मधु, लाक्षा आदि हैं। गंगाधर के अनुसार गंधशास्त्र के प्रयोजनों में से एक प्रयोजन है देवपूजा, अपने इस प्रयोजन के अनुकूल गंगाधर चार देवाताओं को नमन करते हैं– शिव, गणपति, सरस्वती और गन्धर्व या गंध यक्ष। गंध यक्ष को शिव या पूजक माना गया है। उनको मानव और देवताओं के बीच की श्रेणी में रखा गया है। डॉ0 गोडे गंगाधर के मंतव्य को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि सुगंध का विज्ञान भी भौतिक होने के साथ साथ दिव्य भी है क्योंकि सुगंध में वह शक्ति है कि वह कुछ पलों के लिए मनुष्य के शरीर और मन को प्रफुल्लित कर देती है।[22]

आयुर्वेद के ग्रंथों में भी औषधि के रूप में गंध द्रव्यों का प्रयोग वर्णित है। चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, अष्टांग हृदय, आदि में औषधीय तैल, चूर्ण, गुटिका आदि के निर्माण में गंध द्रव्यों का प्रयोग उल्लिखित है। संस्कृत वाङ्मय की ज्ञान विज्ञान से समृद्ध परम्परा में गन्धयुक्ति नवीन विषय नहीं है। पारम्परिक सुगन्धि प्रयोग में प्राकृतिक तत्वों से सुगंध प्राप्त की जाती है जबकि वर्तमान में सुगंध कृत्रिम रसायनों पर निर्भर होती है। सुगंधि का व्यापार आज पूरे विश्व में फैला है। सुगंधि निर्माण की कला बहुत से मनुष्यों की आजीविका का साधन है, ऐसा आज ही नहीं है। हजारों वर्ष पूर्व भी गंध द्रव्यों से सुगंधित द्रव्य तैयार कर गंधशास्त्र के जानकार धनार्जन करते थे। पंचतंत्र में सात प्रकार के व्यापार में गंधद्रव्यों के व्यापार का भी उल्लेख है।[23] गंधयुक्ति का यह विषय मानसिक प्रफुल्लता, शारीरिक स्वास्थ्य और सौन्दर्य, औषधीय और आर्थिक दृष्टिकोण से आज भी प्रासंगिक और उपयोगी है।

संदर्भ सूची–

1. कालिका पुराण – 73.55, मुमुक्ष भवन संग्रह, वाराणसी।
2. ऋग्वेद – 10.184.2
3. ऋग्वेद – 08.19.24
4. ऋग्वेद – 7.59.12
5. ऋग्वेद – 1.124.7
6. ऋग्वेद – 7.55.8
7. महाभारत – 14.49. 441–42, गीता प्रेस, गोरखपुर
8. वात्स्यायन कृत कामसूत्र 1.3.15, कृष्णादास अकादमी, वाराणसी
9. वाराही (बृहत्) संहिता, 77.1, खेमराज, श्रीकृष्ण प्रकाशन, बम्बई
10. वाराही (बृहत्) संहिता, 77.2–7, खेमराज, श्रीकृष्ण प्रकाशन, बम्बई
11. वाराही (बृहत्) संहिता, 77.20–21, खेमराज, श्रीकृष्ण प्रकाशन, बम्बई
12. अग्निपुराण – 224.20, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली
13. अग्निपुराण – 224.23–27, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली
14. विष्णुधर्मोत्तरपुराण, 64.1–2, सर्वोदय साहित्य मंदिर, हैदराबाद
15. विष्णुधर्मोत्तरपुराण, 64.20–24, सर्वोदय साहित्य मंदिर, हैदराबाद
16. विष्णुधर्मोत्तरपुराण, 64.32, सर्वोदय साहित्य मंदिर, हैदराबाद
17. कालिकापुराण – 74.39–45

18. मानसोल्लास – तृतीय विंशति 927–953, बड़ौदा ओरियन्टल इंस्टीट्यूट
19. मानसोल्लास – तृतीय विंशति 1697–1702, बड़ौदा ओरियन्टल इंस्टीट्यूट
20. नागर सर्वस्व 4.3 चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली
21. Studies in Indian Cultural History-Volume-I by Dr. P.K. Gode, Page No.-7, Vishveshvaranand Vedic Research Institute, Hoshiarpur.
22. Studies in Indian Cultural History, Volume-I by Dr. P.K. Gode, Page No.-7, Vishveshvaranand Vedic Research Institute, Hoshiarpur.
23. पंचतंत्र (मित्रभेद) 1.13, खेमराज, श्रीकृष्णदास प्रकाशन।